संत कबीर दास
जन्म – लगभग 600 वर्ष पूर्व
स्थान – बनारस – लहरतारा तालाब के पास
पालन पोषण – नीरु और नीमा नामक जुलाहा दंपत्ति
कार्य – कपडा बुनना
गुरु – संत रामानन्द
धर्म – न हिन्दू न मुसलमान
समस्त पदों का संकलन – बीजक – तीन भाग – रमैनी, सबद, साखी

जीवन के विभिन्न पक्षों पर साखियाँ

साखी = साक्षी

साखी आंखि ज्ञान की, समुझ देख मन मांहि।
बिन साखी संसार का, झगड़ा छूटत नांहि।।

गुरु का महत्व

गुरु गोविंद दोऊ खड़े, काको लागे पाय।
बलिहारी गुरु आपनो, गोविंद दियो मिलाय।।

गुरु हैं बड़े गोविंद ते, मन में देखु विचार।
हरि सिरजे ते वार हैं, गुरु सिरजे ते पार।।

आडम्बर तथा पाखण्ड के विरोधी

पाथर पूजे हरि मिलै, तो मैं पूजूं पहार,
उससे तो चक्की भली, पीसि खाय संसार।।

काँकर पाथर जोरि के, मसजिद लई चुनाय।
ता चढ़ि मुल्ला बाँग दे, क्या बहिरा हुआ खुदाय।।

यह सब झूठी बन्दगी, बिरिया पांच नमाज।
सांचहि मारै झूठ पढ़ि, काजी करै अकाज।।

जंतर मंतर झूठ है, मति भरमो जग कोय।
सार सब्द जानै बिना, कागा हंस न होय।।

माला तो कर में फिरे, जीभ फिरे मुख माहि।
मनवा तो जग में फिरे, ये तो सुमिरन नाहि।।

फूटी आंख विवेक की, लखैं न सन्त असन्त।
जाकै संग दास बीस हैं, ताको नाम महन्त।।

ब्रह्म ज्ञान

ज्यों तिल माही तेल है, ज्यों चकमक में आग।
तेरा सांई तुझ में, जाग सके तो जाग।।

लाली मेरे लाल की, जित देखूं तित लाल।
लाली देखन मैं गई, मैं भी हो गई लाल।।

कबीरा खड़ा बजार में, लिये लकुटिया हाथ।
जो घर फूंके आपना, चले हमारे साथ।।

जिन खोजा तिन पाईयां, गहरे पानी पैठ।
मैं बपुरी डूबन डरी, रही किनारे बैठ।।

मैं जानूं हरि दूर है, हरि है हिरदे मांहि।
आड़ी टाटी कपट की, तासे दीसत नांहि।।

जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि हैं मैं नाहिं।
कबीर नगरी एक में, दो राजा न समांहि।।

हम वासी वा देश के, जहां ब्रह्म का कूप।
अविनासी विनसे नहीं, आवै जाय सरुप।।

बिन पावन का पंथ है, बिन बस्ती का देश।
बिना देह का पुरुष है, कहैं कबीर सन्देश।।

आतम अनुभव ज्ञान की, जो कोय पूछै बात।
सो गूंगा गुड खाय के, कहै कौन मुख स्वाद।।

एकै साधै सब सधै, सब साधै सब जाय।
माली सींचे मूल को, फूलै फलै अघाय।।

पांच पचीशों मारिया, पापी कहिए सोय।
या परमारथ बूझि के, पाप करैं सब कोय।।

माता का सिर मूंड़िये, पिता कुं दीजै मार।
बन्धु मारि डारै कुआं, पंडित करो विचार।।

नदिया जलि कोइला भई, समुंदर लागी आगि।
मच्छी बिरछा चढ़ि गई, ऊठ कबीरा जागि।।

जिहि सर घड़ा न डूबता, मैंगल मलि मलि न्हाय।
देवल बूड़ा कलस सों, पंछि पियासा जाय।।

तीन गुनन की बादरी, ज्यों तरुवर की छांहि।
बाहर रहै सो ऊबरै, भींजै मन्दिर मांहि।।

माता मूये एक फल, पिता मुये फल चार।
भाई मूये हानि है, कहैं कबीर विचार।।

ऊनै आई बादरी, बरसन लगा अंगार।
उठि कबीरा धाह दै, दाझत है संसार।।

पानी में की माछरी, चढ़ि सो परबत जाई।
अग्नी पीया पुट भई, जल पीया मर जाई।।

ज्ञानी भूले ज्ञान कथि, निकट रहा निज रुप।
बाहिर खोजै बापुरै, भीतर वस्तु अनूप।।

भीतर तो भेदा नहीं, बाहर कथै अनेक।
जो पै भीतर लखि परे, भीतर बाहिर एक।।

माला फेरत जुग गया, मिटा न मन का फेर।
कर का मनका डारि दे, मन का मनका फेर।।

तन को जोगी सब करै, मन को करै न कोय।
सहजै सब सिधि पाइये, जो मन जोगी होय।।

मैं मेरी जब जायगी, तब आवेगी और।
जब यह निस्चल होयगा, तब पावेगा ठौर।।

जब लग नाता जगत का, तब लग भगिति न होय।
नाता जोड़े हरि भजे, भगत कहावें सोय।।

दस द्वारे का पींजरा, तामें पंछी मौन।
रहे को अचरज भयौ, गये अचम्भा कौन।।

कबीर सोई सूरमा, मन सों मांड़ै जूझ।
पांचो इन्द्री पकड़ि के, दूरि करै सब दूझ।।

कबिरा एक न जाण्यां, बहु जाण्यां क्या होइ।
एकै तै सब होत है, सब तैं एक न होइ।।

यह तो घर है प्रेम का, खाला का घर नाहिं।
सीस उतारे भुँई धरे, तब पैठें घर मांहि।।

ईश्वर कर्ता एवं दाता

साहिब सो सब होत है, बंदे से कछु नांहि।
राई से परबत करै, परबत राई मांहि।।

जो कुछ किया सो तुम किया, मैं कछु कीया नांहिं।
कहूं कहीं जो मैं किया, तुमहीं थे मुझ मांहि।।

संतोषी जीवन

सांई इतना दीजिए, जामें कुटुम समाय।
मैं भी भूखा न रहूं, साधु न भूखा जाय।।

रुखा सूखा खाय के, ठंडा पानी पीव।
देखि पराई चूपड़ी, मत ललचावै जीव।।

आधी औ रुखी भली, सारी सोग संताप।
जो चाहेगा चूपड़ी, बहुत करेगा पाप।।

कबीर सो धन संचिये, जो आगे को होय।
सीस चढ़ाये गाठरी, जात न देखा कोय।।

गो धन गज धन बाजि धन और रतन धन खान।
जब आवै सन्तोष धन, सब धन धूरि समान।।

बहुत पढ़ना व्यर्थ

पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ, पंडित हुआ न कोय।
एकै आखर प्रेम का, पढ़ै सो पंड़ित होय।।

चारि अठारह नव पढ़ी, छौ पढ़ि खोया मूल।
कबीर मूल जानै बिना, ज्यौं पंछी चण्डूल।।

पढ़ी गुनी पाठक भये, समुझाया संसार।
आपन तो समुझै नहीं, वृथा गया अवतार।।

ज्ञानी ज्ञाता बहु मिले, पण्डित कवी अनेक।
राम रता इन्द्री जिता, कोटी मध्ये एक।।

मन वचन कर्म की एकरुपता

करनी बिन कथनी कथै, अज्ञानी दिन रात।
कूकर सम भूकत फिरै, सुनी सुनाई बात।।

मन मैला तन ऊजरा, बगुला कपटी अंग।
तासों तो कौवा भला, तन मन एकहि रंग।।

साधू

जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिए ज्ञान।
मोल करो तलवार का, पड़ी रहन दो म्यान।।

तन को जोगी सब करैं, मन को करै न कोय।
सहजै सब सिधि पाइये, जो मन जोगी होय।।

कबीर तेई पीर हैं, जे जानैं पर पीर।
जे पर पीर न जानहीं, ते काफिर बे पीर।।

कबीरा संगति साधु की, हरे और की व्याधि।
संगति बुरी असाधु की, आठो पहर उपाधि।।

साधू ऐसा चाहिये, जैसा सूप सुभाय।
सार सार को गहि रहै, देई असार बहाय।।

सन्त न छाड़ै सन्तता, कोटिक मिलै असंत।
मलय भुवंगम बेधिया, शीतलता न तजन्त।।

जीवन जीने की कला

दुख में सुमिरन सब करैं, सुख में करै न कोय।
जो सुख में सुमिरन करैं, दुःख काहे को होय।।

जा घट प्रेम न संचरै, सो घट जानु मसान।
जैसे खाल लुहार की, सांस लेत बिन प्रान।।

कबीर गर्व न कीजिए, काल गहे कर केश।
ना जानौ कित मारि है, क्या घर क्या परदेश।।

रात गंवाई सोय कर, दिवस गंवायो खाय।
हीरा जनम अमोल था, कौड़ी बदले जाय।।

काल करै सो आज कर, आज करै सो अब्ब।
पल में परलय होयगी, बहुरि करेगा कब्ब।।

जो तोको कांटा बुवै, ताको बो तू फूल।
तोहि फूल को फूल है, वाको है तिरसूल।।

ऐसी बानी बोलिए, मन का आपा खोय।
औरन को सीतल करै, आपहु सीतल होय।।

सांच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप।
जाके हिरदे सांच है, ताके हिरदे आप।।

जहां दया वहां धर्म है, जहां लोभ तहं पाप।
जहां क्रोध वहां काल है, जहां क्षमा वहं आप।।

माया मुई न मन मुआ, मरि मरि गया शरीर।
आशा तृष्णा ना मुई, यौं कह गया कबीर।।

आवत गारी एक है, उलटत होय अनेक।
कहैं कबीर नहिं उलटिये, वही एक ही एक।।

कबीर यह मन लालची, समझै नहीं गंवार।
भजन करन को आलसी, खाने को तैयार।।

करता था तो क्यों रहा, अब करि क्यों पछिताय।
बोवे पेड़ बबूल का, आम कहाँ ते खाय।।

बड़ा हुआ तो क्या हुआ, जैसे पेड़ खजूर।
पंथी को छाया नहीं, फल लागै अति दूर।।

बड़ा बड़ाई न करे, छोटा बहु इतराय।
ज्यों प्यादा फरजी भया, टेढ़ा–टेढ़ा जाय।।

तेरी बैरी कोय नहीं, तेरा बैरी फैल।
अपने फैल मिटाय ले, गली–गली कर सैल।।

कीन्हें बिना उपाय के, देव कबहुं नहिं देत।
खेत बीज बोवै नहीं, तो क्यों जामे खेत।।

बुरा जो खोजन मैं चला, बुरा न मिलिया कोय।
जो दिल खोजा आपना, मुझसा बुरा न कोय।।

आब गया आदर गया, नैनन गया सनेह।
यह तीनो तब ही गये, जब हिं कहा कुछ देह।।

अति का भला न बोलना, अति की भली न चूप।
अति का भला न बरसना, अति की भली न धूप।।

प्रेम न बाड़ी ऊपजै, प्रेम न हाट बिकाय।
राजा–परजा जेहि रुचें, शीश देई ले जाय।।

लघुता से प्रभुता मिले, प्रभूता से प्रभू दूरि।
चींटी ले शक्कर चली, हाथी के सिर धूरि।।

कबीरा खड़ा बजार में, सबकी मांगे खैर।
ना कांहू से दोस्ती, ना कांहू से बैर।।

चलती चाकी देख के दिया कबीरा रोय।
दो पाटन के बीच में, साबुत बचा न कोय।।

निन्दक नेरै राखिये, आंगन कुटी छवाय।
बिन पानी साबुन बिना, निरमल करै सुभाय।।

सातो सागर मैं फिरा, जम्बुदीप दै पीठ।
परनिंदा नाहीं करै, सो कोय बिरला दीठ।।

दोष पराया देखि करि, चले हसन्त हसन्त।
अपना याद न आवई, जाका आदि न अन्त।।

काहू को नहिं निन्दिये, सबको कहिये सन्त।
करनी अपनी से तरे, मिलि भजिये भगवन्त।।

शराब, मांसाहार आदि का निषेध

मांस मछरिया खात है, सुरापान सो हेत।
ते नर जड़ से जायेंगे, ज्यो मूरी को खेत।।

मांस मांस सब एक है, मुरगी हिरनी गाय।
आंख देखि नर खात है, ते नर नरकहि जाय।।

अंत समय

कबिरा जब पैदा हुये, जग हंसे हम रोये।
ऐसी करनी कर चले, हम हंसे जग रोये।।

लूटि सकै तो लूटि ले, राम नाम की लूट।
फिर पाछे पछिताहुगे, प्राण जाहिंगे छूट।।

झीनी झीनी बीनी चदरिया,
दास कबीर जतन सो ओढ़ी,
ज्यों की त्यों धर दीनी चदरिया।।

ई जग जरते देखिया, अपनी–अपनी आग।
ऐसा कोई ना मिला, जासो रहिए लाग।।

का रे बड़े कुल उपजे, जो रे बड़ी बुधि नाहिं।
जैसा फूल उजारि का, मिथ्या लगि सरि जांहि।।

कबीर गर्व न कीजिए, रंक न हंसिए कोय।
अजहुं नाव समुद्र में, ना जाने क्या होय।।

हरि रुठे गति एक है, गुरु शरणागत जाय।
गुरु रुठे एकौ नहीं, हरि नहिं करे सहाय।।

लौ लागी तब जानिये, छूटि न कबहूं जाय।
जीवन लौ लागी रहे, मूये तहां समाय।।

लौ लागी तो डर किसा, आप बिसरजन देह।
अमृत पीवै आतमा, गुण सों जुडै सनेह।।

लागी लागी क्या करै, लागी नाहीं एक।
लागी सोई जानिये, पड़े कलेजे छेक।।

ग्रंथन माहीं अर्थ है, अर्थ माहि है भूल।
लौ लागी निरभय भया, मिटि गया संसै सूल।।

गंग जमुन के बीच में, सहज सुन्नन लौ घाट।
तहां कबीरा मठ रचा, मुनिजन जोवे बाट।।

जिहि बन सिंह न संचरै, पंछी उडि न जाय।
रैन दिवस की गम नहीं, तहं कबीर लौ लाय।।

भौसागर जल विष भरा, मन नहिं बांधे धीर।
सबल सनेही हरि मिला, उतरा पार कबीर।।

लौ लागी निरभय भया, भरम भया सब दूर।
बन बन में कहं ढूंढ़ता, राम इहां भरपूर।।

रचनहार को चीन्हि ले, खाने को क्या रोय।
मन मन्दिर में पैठि के, तान पिछोरी सोय।।

सिरजन हारे सिरजिया, आटा पानी लौन।
देनेहारा देत है, मेटनहारा कौन।।

सांई इतना दीजिए, जामें कुटुंब समाय।
मैं भी भूखा न रहूं, साधु न भूखा जाय।।

हरिजन गांठि न बाधहीं, उदर समाना लेय।
आगे पीछे हरि खड़े, जो मांगै सो देय।।

कबीर चिन्ता क्या करे, चिन्ता सों क्या होय।
चिन्ता तो हरि ही करे, चिन्ता करो न कोय।।

पद गावै लोलीन ह्वै, कटे न संसै फांस।
सबै पछोरै थोथरा, एक बिना विश्वास।।

घट में जोति अनूप है, रिजक मौत जिव साथ।
कहा सार हैं मनुस का, कलम धनी के हाथ।।

करम करीमा लिखि रहा, अब कछु लिखा न होय।
मासा घटै न तिल बढ़ै, जो सिर पटके कोय।।

डोरी लागी भय मिटा, मन पाया विसराम।
चित्त चहूंटा राम सों, याही केवल धाम।।

अब तूं काहे को डरै, सिर पर हरि का हाथ।
हस्ती चढ़कर डोलिये, कूकर भुसे जु लाख।।

राम किया सोई हुआ, राम करै सो होय।
राम करै सो होयगा, काहे कल्यो कोय।।

किए बिना मांगे बिना, जान बिना सब आय।
काहे को मन कल्पिये, सहजे रहा समाय।।

हांसी खेलां पिव मिलै, कौन सहे खुरसान।
काम क्रोध तृष्णा तजै, ताहि मिले भगवान।।

अंक भरै भरि भेंटिया, मन में बांधी धीर।
कहैं कबीर वह क्यौं मिले, जब लग दोय शरीर।।

लाली मेरे लाल की, जित देखूं तित लाल।
लाली देखन मैं गई, मैं भी हो गई लाल।।

उलटि समानी आप में, प्रगटी जोति अनंत।
साहिब सेवक एक संग, खेलें सदा बसंत।।

हम वासी वा देश के, जहां ब्रह्म का कूप।
अविनासी विनसे नहीं, आवै जाय सरुप।।

बिन पावन का पंथ है, बिन बस्ती का देश।
बिना देह का पुरुष है, कहैं कबीर सन्देश।।

मेरी मिटि मुक्ता भया, पाया अगम निवास।
अब मेरे दूजा नहीं, एक तुम्हारी आस।।

पवन नहीं पानी नहीं, नहिं धरणी आकास।
तहां कबीरा सन्त जन, साहिब पास खवास।।

जब मैं था तब तू नहीं, अब तू हैं मैं नाहिं।
कबीर नगरी एक में, दो राजा न समांहि।।

मैं जाना मैं और था, मैं तजि ह्वै गया सोय।
मैं तैं दोऊ मिट गये, रहे कहन को दोय।।

ऐसा अविगति अलख है, अलख लखा नहीं जाय।
जोति सरुपी राम है, सब में रह्यौ समाय।।

मैं जानूं हरि दूर है, हरि है हिरदे मांहि।
आड़ी टाटी कपट की, तासे दीसत नांहि।।

पांच पचीशों मारिया, पापी कहिए सोय।
या परमारथ बूझि के, पाप करैं सब कोय।।

अचर चर चर परिहरै, मरै न चारै जाय।
बारह मास बिलोघना, घूमै एकै भाय।।

माता का सिर मूंड़िये, पिता कुं दीजै मार।
बन्धु मारि डारै कुआं, पंडित करो विचार।।

सांई मेरा एक तूं, और न दूजा कोय।
दूजा सांई क्या करुं, तुझ सम और न कोय।।

एकै साधै सब सधै, सब साधै सब जाय।
माली सींचे मूल को, फूलै फलै अघाय।।

कबीर सोई सूरमा, मन सों मांड़ै जूझ।
पांचो इन्द्री पकड़ि के, दूरि करै सब दूझ।।

नाम कुल्हाड़ी कुबुधि बन, काटि किया मैदान।
कबीर जीते मान गढ़, मारै पांचौं खान।।

मानुस खोजत मैं फिरा, मानुस बड़ा सुकाल।
जाको देखत दिल घिरे, ताका पड़ा दुकाल।।

साधू सब ही सूरमा, अपनी अपनी ठौर।
जिन ये पांचौ चूरिया, सो माथे का मौर।।

सिर साटै का खेल है, छांड़ि देय सब बान।
सिर साटै साहिब मिलै, तोहु हानि मति जान।।

माखि गुड़ में गड़ि रही, पंख रही लपटाय।
तारी पीटै सिर धुनै, लालच बुरी बलाय।।

रुखा सूखा खाय के, ठंडा पानी पीव।
देखि पराई चूपड़ी, मत ललचावै जीव।।

आधी औ रुखी भली, सारी सोग संताप।
जो चाहेगा चूपड़ी, बहुत करेगा पाप।।

जिभ्या कर्म कछोटरी, जो तीनों बस होय।
राजा परजा जमपुरी, गंजि सकै नहिं कोय।।

यह सब झूठी बन्दगी, बिरिया पांच नमाज।
सांचहि मारै झूठ पढ़ि, काजी करै अकाज।।

कबीर तेई पीर हैं, जे जानैं पर पीर।
जे पर पीर न जानहीं, ते काफिर बे पीर।।

कबीर प्याला प्रेम का, अंतर लिया लगाय।
रोम रोम में रमि रहा, और अमल क्या खाय।।

पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ, पंडित हुआ न कोय।
एकै अक्षर प्रेम का, पढ़ै सो पंड़ित होय।।

कबीर पढ़ना दूर कर, अति पढ़ना संसार।
पीर न उपजै जीव की, क्यौं पावै करतार।।

चारि अठारह नव पढ़ी, छौ पढ़ि खोया मूल।
कबीर मूल जानै बिना, ज्यौं पंछी चण्डूल।।

पढ़ी गुनी पाठक भये, समुझाया संसार।
आपन तो समुझै नहीं, वृथा गया अवतार।।

ज्ञानी ज्ञाता बहु मिले, पण्डित कवी अनेक।
राम रता इन्द्री जिता, कोटी मध्ये एक।।

आत्म तत्व जानै नहीं, कोटिक कथे जु ज्ञान।
तारे तिमिर न भागहीं, जग लग उगै न भान।।

कबीर कलियुग कठिन है, साधु न मानै कोय।
कामी क्रोधी मसखरा, तिनका आदर होय।।

हरि सुमिरन सांची कथा, कोइ न सुनि है कान।
कलिजुग पूजा दंभ की, बाजारी का मान।।

निन्दक नेरै राखिये, आंगन कुटी छवाय।
बिन पानी साबुन बिना, निरमल करै सुभाय।।

सातो सागर मैं फिरा, जम्बुदीप दै पीठ।
परनिंदा नाहीं करै, सो कोय बिरला दीठ।।

दोष पराया देखि करि, चले हसन्त हसन्त।
अपना याद न आवई, जाका आदि न अन्त।।

कंचन को तजबो सहल, सहल त्रिया को नेह।
निन्दा केरो त्यागबो, बड़ा कठिन है येह।।

काहू को नहिं निन्दिये, सबको कहिये सन्त।
करनी अपनी से तरे, मिलि भजिये भगवन्त।।

पहिले सेर पचीस का, सन्तों करो अहार।
गुरु सब्दै लागे रहो, दुःख न होय लगार।।

सुषमन डिब्बी पोत करी, दीन्ही आगि चढ़ाय।
सेर पांच की रांधि करि, सन्त होय सो खाय।।

सेर पांच को खाय करि, सेर तीन की खाय।
सेर तिन खाइ ना सकै, सेर दुई को खाय।।

सेर दुई को खाय करि, पाया अगम अलेख।
सतगुरु सब्दै यौं कहा, जाके रुप न रेख।।

काजल तजै न श्यामता, मुक्ता तजै न स्वेत।
दुर्जन तजै न कुटिलता, सज्जन तजै न हेत।।

दुर्जन की करुणा बुरी, भलो सज्जन की त्रास।
सूरज जब गरमी करै, तब बरसन की आस।।

चंदा सूरज चलत न दीसे, बढ़त न दीसे बेल।
हरिजन हरि भजता न दिसे, ये कुदरत का खेल।।

साहिब सो सब होत है, बंदे से कछु नांहि।
राई से परबत करै, परबत राई मांहि।।

ना कछु किया न करि सका, न करने जोग शरीर।
जो कुछ किय साहिब किये, ताते भये कबीर।।

जो कुछ किया सो तुम किया, मैं कछु कीया नांहिं।
कहूं कहीं जो मैं किया, तुमहीं थे मुझ मांहि।।

कीया कछू न होत है, अनकीया ही होय।
कीया जो कछु होत तो, करता औरै कोय।।

धन धन सांई तूं बड़ा, तेरी अनुपम रीत।

सकल भुवन पति सांइया, ह्वै करि रहै अतीत।।

अजगर करै न चाकरी, पंखी करै न काम।
दास कबीरा यूं कहैं, सबके दाता राम।।

जाको राखै सांईया, मारि सकै नहिं कोय।
बाल न बांका करि सके, जो जग बैरी होय।।

निर्विकार निर्भय तुही, और सकल भय मांहि।
सब पर तेरी साहेबी, तुझ पर साहेब नांहि।।

आतम अनुभव सूख की, जो कोई बूझै बात।
कै जो कोई जानई, कै अपनो ही गात।।

आतम अनुभव जब भयो, तब नहिं हर्ष विषाद।
चित्र दीप सम ह्वै रहे, तजि कर वाद विवाद।।

आतम अनुभव ज्ञान की, जो कोय पूछै बात।
सो गूंगा गुड खाय के, कहै कौन मुख स्वाद।।

नर नारी के सूख को, खसी नहीं पहिचान।
त्यौं ज्ञानी के सूख को, अज्ञानी नहिं जान।।

कागद लिखै सो कागदी, की व्यौहारी जीव।
आतम दृष्टि कहां लिखै, जित देखै तित पीव।।

लिखा लिखी की है नहीं, देखा देखी बात।
दुलहा दुलहिन मिलि गए, फीकी पड़ी बरात।।

श्याम सब्ज विधि पंच जे, पीत अरुन अरु सेत।
चक्षूमान अचक्षु को, ज्यों नहिं उपमा देत।।

ज्ञान भक्ति वैराग सुख, पीव ब्रह्म लौं धाय।
आतम अनुभव सेज सुख, तहां न दूजा जाय।।

ज्ञानी जुक्ति सुनाइया, को सुनि करै विचार।
सूरदास की इस्तरी, कापर करै सिंगार।।

ज्ञानी भूले ज्ञान कथि, निकट रहा निज रुप।

बाहिर खोजै बापुरै, भीतर वस्तु अनूप।।

भीतर तो भेदा नहीं, बाहर कथै अनेक।
जो पै भीतर लखि परे, भीतर बाहिर एक।।

नैन समाने नैन में, बैन समाने बैन।
जीव समाने बूझ में, रहै ऐन के ऐन।।

सुखवत मांहि सब गले, मन बुधि चित परकास।
छिनक मांहि परलै भया, को ठाकुर को दास।।

जागृत जागृत सांच है, सोवन सपना सांच।
देह गए दोऊ गए, ज्यों भगली का नाच।।

अन्धे मिलि हाथी छुआ, अपने अपने ज्ञान।
अपनी अपनी सब कहैं, किसको दीजै कान।।

अन्धों का हाथी सही, हाथ टटोल टटोल।
आंखो से नहिं देखिया, ताते भिन भिन बोल।।

दूजा ह्वै तो बोलिये, दूजा झगरा सोहि।
दो अन्धों के नाच में, कापै काको मोहि।।

बूझ सरीखी बात है, कहन सरीखी नांहि।
जेते ज्ञानी देखिए, तेते संसै मांहि।।

ज्ञानी तो निरभय भया, मानै नाहीं संक।
इन्द्रिन केरे बसि पड़ा, भुगते नरक निसंक।।

आसा तो गुरुदेव की, और गले की फांस।
चंदन ढिग चंदन भये, देखो आक पलास।।

आस बास जग फंदिया, रहै उरध लपटाय।
नाम आस पूरन करै, सकल आस मिटि जाए।।

आसा जीवै जग मरै, लोग मरै मरि जांहि।
धन संचै ते भी मरै, उबरै सो धन खाहि।।

आसा तृस्ना सिंधु गति, तहां न मन ठहराय।

जो कोइ आसा में फंसा, लहर तमाचा खाय।।

आसा तृस्ना दो नदी, तहां न मन ठहराय।
इन दोनो को लांघ करि, चौड़े बैठे जाय।।

कबीर जोगी जगत गुरु, तजै जगरत की आस।
जो जग की आसा करै, जगत गुरु वह दास।।

बहुत पसारा जनि करै, कर थोड़े की आस।
बहुत पसारा जिन किया, तेई गए निरास।।

आसन मारे कह भयो, मरी न मन की आस।
तेली केरे बैल ज्यौं, घर ही कोस पचास।।

कबीर सो धन संचिये, जो आगे को होय।
सीस चढ़ाये गाठरी, जात न देखा कोय।।

आस आस जग फंदिया, गले भरम की फांस।
जन्म जन्म भरमत फिरै, तबहुं न छूटी आस।।

आसा को ईंधन करुं, मनसा करुं भभूत।
जोगी फिरि फेरी करुं, यौं बनि आवै सूत।।

कबीर तहां न जाइये, जहां कपट का हेत।
जानो कली अनार की, तन राता मन सेत।।

हेत प्रीति से जो मिलै, तासों मिलिये धाय।
अन्तर राखी जो मिलै, तासो मिलै बलाय।।

चित कपटी सबसों मिलै, मांहि कुटिल कठोर।
इक दुरजन इक आरसी, आगै पीछै और।।

दिल ही पर जो दिल मिलै, तो दिल दगा न होय।
सो दिल कबहूं न बीसरै, कोटि करै जो कोय।।

ज्ञानी नमि गुरु मुख नमै, नमै चतूर सुजान।
दगाबाज दूना नमै, चीता चोर कमान।।

सुखिया ढूंढ़त मैं फिरुं, सुखिया मिलै न कोय।

जाके आगे दुःख कहूं, पहिले उठै रोय।।

भूप दुखी अवधूत दुखी, दुखी रंक विपरीत।
कहैं कबीर ये सब दुखी, सुखी संत मनजीत।।

बासर सुख नींद रैन सुख, ना सुख धूप न छांह।
कै सुख सरनै राम कै, कै सुख सन्तों मांह।।

स्वर्ग मृत्यु पाताल में, पूर तीन सुख नांहि।
सुख साहिब के भजन में, अरु संतन के मांहि।।

संपति देखि न हरषिये, विपति देखि मत रोय।
संपति है तहां विपति है, करता करै सो होय।।

संपति तो हरि मिलन है, विपति जु राम वियोग।
संपति विपति राम कहू, आन कहै सब लोग।।

लक्ष्मी कहै मैं नित नवी, किसकी न पूरी आस।
किते सिंहासन चढ़ि चले, कितने गए निरास।।

जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिए ज्ञान।
मोल करो तलवार का, पड़ी रहन दो म्यान।।

तीरथ न्हाये एक फल, साधु मिले फल चार।
सतगुरु मिलै अनेक फल, कहैं कबीर विचार।।

तन को जोगी सब करैं, मन को करै न कोय।
सहजै सब सिधि पाइये, जो मन जोगी होय।।

कामी क्रोधी, लालची, इनसे भक्ति न होय।
भक्ति करै कोइ सूरमा, जाति बरन कुल खोय।।

कबीर सब जग निरधना, धनवन्ता नहिं कोय।
धनवंता सोई जानिए, राम नाम धन होय।।

लूटि सकै तो लूटि ले, राम नाम की लूट।
फिर पाछे पछिताहुगे, प्राण जाहिंगे छूट।।

दुख में सुमिरन सब करैं, सुख में करै न कोय।
जो सुख में सुमिरन करैं, दुःख काहे को होय।।

माला फेरत जुग गया, मिटा न मन का फेर।
कर का मनका डारि दे, मन का मनका फेर।।

सांस सांस पर नाम ले, वृथा सांस मति खोय।
ना जानै इस सांस को, आवन होय न होय।।

तन थिर मन थिर बचन थिर, सुरति निरति थिर होय।
कहैं कबीर उस पलक को, कल्प न पावै कोय।।

जा घट प्रेम न संचरै, सो घट जानु मसान।
जैसे खाल लुहार की, सांस लेत बिन प्रान।।

कबीर गर्व न कीजिए, काल गहे कर केश।
ना जानौ कित मारि है, क्या घर क्या परदेश।।

रात गंवाई सोय कर, दिवस गंवायो खाय।
हीरा जनम अमोल था, कौड़ी बदले जाय।।

काल करै सो आज कर, आज करै सो अब्ब।
पल में परलय होयगी, बहुरि करेगा कब्ब।।

आए हैं ते जाएंगे, राजा रंक फकीर।
एक सिंघासन चढ़ि चले, एक बंधे जंजीर।।

जो तोको कांटा बुवै, ताको बो तू फूल।
तोहि फूल को फूल है, वाको है तिरसूल।।

ऐसी बानी बोलिए, मन का आपा खोय।
औरन को सीतल करै, आपहु सीतल होय।।

राम नाम सुमिरन करै, सतगुरु पद निज ध्यान।
आतम पूजा जिव दया, लहे सो मुक्ति अमान।।

जंत्र मंत्र सब झूठ है, मति भरमो जग कोय।
सार सब्द जानै बिना, कागा हंस न होय।।

सांच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप।
जाके हिरदे सांच है, ताके हिरदे आप।।

कबीर यह मन लालची, समझै नहीं गंवार।
भजन करन को आलसी, खाने को तैयार।।

तन का बैरी कोई नहीं, जो मन सीतल होय।
तूं आपा को डारि दे, दया करे सब कोय।।

माया मुई न मन मुआ, मरि मरि गया शरीर।
आशा तृष्णा ना मुई, यौं कथि कहैं कबीर।।

जहां दया वहां धर्म है, जहां लोभ तहं पाप।
जहां क्रोध वहां काल है, जहां क्षमा वहं आप।।

कांकर–पाथर जोड़ के मस्जिद लियो बनाय,
तापे मुल्ला बांग दे, क्या बहिरा भयो खुदाय।

गुरु गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागू पांव,
बलिहार गुरु आपनो, गोविन्द दियो बताय।

सब धरती कागज करुं, लिखनी सब बन राय।
सात समुद्र की मसि करुं, गुरु गुण लिखा न जाय।।

गुरु बिन ज्ञान न उपजै, गुरु बिन मिलें न मोष।
गुरु बिन लखै न सत्य को, गुरु बिन मिटै न दोष।।

गुरु कुम्हार शिष कुम्भ है, गढ़ि–गढ़ि काढ़ै खोट।
अन्तर हाथ सहार दै, बाहर बाहैं चोट।।

गुरु लोभी शिष लालची, दोनों खेलें दांव।
दोनों बूड़े बापुरे, चढ़ि पाकर की नांव।।

सद्गुरु ऐसा कीजिये, लोभ मोह भ्रम नाहिं।
दरिया सो न्यारा रहे, दीसे दरिया माहिं।।

बंधे को बन्धा मिला, छूटे कौन उपाय।
कर सेवा निरबंध की, पल में लेय छुड़ाय।।

सत्गुरु मिले जु सब मिले, न तो मिला न कोय।
मात–पिता सुत बौधवा, ये तो घर–घर होय।।

कबीर लहरि समुद्र की, मोती बिखेर आय।
बगुला परख न जानई, हंसा चुनि चुनि खाय।।

काम क्रोध मद लोभ की, जब लग घाट में खान।
कबीर मूरख पण्डिता, दोनों एक समान।।

कंचन को तजबो सहल, सहल त्रिया को नेह।
निन्दा केरो त्याग बो, बड़ा कठिन है येह।।

काहू को नहिं निन्दिये, चाहे जैसा होय।
फिर फिर ताको बन्दिये, साधु लच्छ है सोय।।

निन्दक तो है नाथ बिन, निसदिन विष्ठा खाय।
गुन छाड़ै अवगुन गहै, तिसका यही सुभाय।।

बहुत जतन करि कीजिये, सब फल जाये नशाय।
कबीर संचै सूम धन, अन्त चोर ले जाय।।

अष्ट सिद्धि नौ निद्धि लौ, सबहिं मोह की खान।
त्याग मोह की वासना, कहै कबीर सुजान।।

मैं मेरी जब जायगी, तब आवेगी और।
जब यह निस्चल होयगा, तब पावेगा ठौर।।

बड़ा बड़ाई न करे, छोटा बहु इतराय।
ज्यों प्यादा फरजी भया, टेढ़ा–टेढ़ा जाय।।

बड़ा हुआ तो क्या हुआ, जैसे पेड़ खजूर।
पंथी को छाया नहीं, फल लागै अति दूर।।

मान बड़ाई न करें, बड़ा न बोले बोल।
हीरा मुख से न कहे, लाख हमारा मोल।।

तेरी बैरी कोय नहीं, तेरा बैरी फैल।
अपने फैल मिटाय ले, गली–गली कर सैल।।

करे बुराई सुख चहै, कैसे पावै कोय।
रोपै पेड़ बबूल का, आम कहां ते होय।।

कीन्हें बिना उपाय के, देव कबहुं नहिं देत।
खेत बीज बोवै नहीं, तो क्यों जामे खेत।।

फूटी आंख विवेक की, लखैं न सन्त असन्त।
जाकै संग दास बीस हैं, ताको नाम महन्त।।

विद्या मद औ गुनहि मद, राज मद्द उनमद्द।
इतने मद को रद करें, तब पावै अनहद्द।।

27. मुसलिम मारे करद सों, हिन्दू मार तलवार।
कहैं कबीर दोनों मिलि, जैहैं जम के द्वार।।

28. मांस मछरिया खात हैं, सुरापात सों हेत।
ते नर जड़ से जायेंगे, ज्यों मूरी को खेत।।

29. हिन्दू के दाया नहीं, मेहर तुरक के नाहिं।
कहैं कबीर दोनो गये, लख चौरासी माहिं।।

30. कहता हूं कहि जात हूं, कहा सु मान हमार।
जाका गल तुम कटि हो, सों फिर काटि तुम्हार।।

31. यह सब झूठी बन्दगी, बिरिया पांच नमाज।
सांचहि मोर झूठ पढ़ि, काजी करै अकाज।।

32. पीर सबन की एक सी, मूरख जानै नाहिं।
अपना गला कटाय के, किस्त बसै क्यों नाहिं।।

33. भली–भली सब कोई कहैं, भली क्षमा को रुप।
जाके मनहिं क्षमा नहीं, सो बूड़े भव कूप।।

34. क्षमा बड़न को चाहिये, छोटन को उत्पात।
कहा विश्नु की घटि गई, जो भृगु मारी लात।।

35. क्षमा क्रोध की छै करैं, जो काहू पै होय।
कहैं कबीर दास को, गंजि सकै नहिं कोय।।

36. सीलवंत सबसों बड़ा, सब रत्नों की खान।
तीन लोक की सम्पदा, रही सील में आन।।

37. ज्ञानी ध्यानी संयमी, दाता सूर अनेक।
जपिया तपिया बहुत हैं, सीलवंत कोई एक।।

38. गो धन गज धन बाजि धन और रतन धन खान।
जब आवै सन्तोष धन, सब धन धूरि समान।।

39. दया धर्म का मूल है, पाप मूल संताप।
जहां क्षमा तहं धर्म है, जहां दया तहं आप।।

40. कबीर सोइ पीर है, जो जाने पर पीर।
जो पर पीर न जानई, सो काफिर बेपीर।।

41. बुरा जो खोजन मैं चला, बुरा न मिलिया कोय।
जो दिल खोजा आपना, मुझसा बुरा न कोय।।

42. वेद थके, ब्रह्मा थके, थाके सेस महेस।
गीता हूं की गत नहीं, संत किया परवेस।।

43. जौन भाव ऊपर रहै, भितर बसावै सोय।
भीतर और न बसावई, ऊपर और न होय।।

44. आशा तजि माया तजै, मोह तजै अरु मान।
हरष शोक निन्दा तजै, कहैं कबीर सन्त जान।।

45. सन्त न छाड़ै सन्तता, कोटिक मिलै असंत।
मलय भुवंगम बेधिया, शीतलता न तजन्त।।

46. तन को जोगी सब करै, मन को करै न कोय।
सहजै सब सिधि पाइये, जो मन जोगी होय।।

47. भेष देख मत भूलिये बूझि लीजिये ज्ञान।
बिना कसौटी होत नहिं, कंचन की पहिचान।।

48. आब गया आदर गया, नैनन गया सनेह।
यह तीनो तब ही गये, जब हिं कहा कुछ देह।।

49. साखी शब्द बहुतक सुना, मिटा न मन का मोह।
पारस तक पहुंचा नहीं, रहा लोभ का लोह।।

50. ऊँचे कुल की जनमिया, करनी ऊँच न होय।
कनक कलश मद सों भरा, साधु निन्दा सोय।।

51. कबीर संगति साधु की, जो करि जाने कोय।
सकल बिरछ चन्दन भये, बाँस न चन्दन होय।।

52. जीवन जोबन राज मद, अविचल रहै न कोय।
जु दिन जाय सत्संग में, जीवन का फल सोय।।

53. चर्चा करु तब चौहटे, ज्ञान करो तब दोय।
ध्यान धरो तब एकिला, और न दूजा कोय।।

54. सन्त सुरसरी गंग जल, आनि पखारा अंग।
मैले से निरमल भये, साधू जन के संग।।

55. सज्जन सों सज्जन मिले, होवे दो दो बात।
गदहा सो गदहा मिले, खावे दो दो लात।।

56. मूरख को समुझावते, ज्ञान गाँठि का जाय।
कोयला होय न ऊजला, सौ मन साबुन लाय।।

57. करता था तो क्यों रहा, अब करि क्यों पछिताय।
बोवे पेड़ बबूल का, आम कहाँ ते खाय।।

58. शब्द सम्हारे बोलिये, शब्द के हाथ न पाँव।
एक शब्द औषधि करे, एक शब्द करे घाव।।

59. जंत्र मंत्र सब झूठ है, मत भरमो जग कोय।
सार शब्द जानै बिन, कागा हंस न होय।।

60. शब्द जु ऐसा बोलिये, तन का आपा खोय।
औरन को शीतल करे, आपन को सुख होय।।

61. धन रहै न जोबन रहै, रहै न गाम न ठाम।
कबीर जग में जस रहै, करिदे किसी का काम।।

62. ज्ञानी भूले ज्ञान कथि, निकट राह जिन रुप।
बाहिर खोजै बपुरे, भीतर वस्तु अनूप।।

63. हिन्दू मुआ राम भाई, मुसलमान खुदाय।
कहै कबीर सो जीवता, दोउ के संग न जाय।।

64. अति का भला न बोलना, अति की भली न चूप।
अति का भला न बरसना, अति की भली न धूप।।

65. हिंदू कहूँ तो मैं नहीं, मुसलमान भी नाहिं।
पाँच तत्व का पूतरा, गैबी खलै माहिं।।

66. पाँचों इन्द्रियाँ छठा मन, सम संगत सूचंत।
कहैं कबीर जग क्या करे, सातों गाँठि निचिंत।।

67. कुबुधि को सूझै नहीं, उठि उठि देवल जाय।
दिल देहरा को खबरि नहीं, पाथर ते कह पाय।।

68. सब बन तो तुलसी भई, परबत सालिगराम।
सब नदियें गंगा भईं, जाना आतम राम।।

69. तुरुक मसीहत देहर हिन्दू, आप आप को धाय।
अलख पुरुषघट भीतरे, ताका पार न पाय।।

70. कबीर पाहन पूजि के, होन चहत भव पार।
भींजि पानि भेदै नदी, बूड़ै जिन सिर भर।।

71. पाहन को क्या पूजिये, जो नहिं देय जवाब।
अंधा नर आशा मुखी, यों ही खोवै आब।।

72. हंसा पय को काढिले, क्षीर नीर निसवार।
ऐसे गहै जु सार को, सो जन उतरे पार।।

73. साधू ऐसा चाहिये, जैसा सूप सुभाय।
सार सार को गहि रहै, देई असार बहाय।।

74. करनी बिन कथनी कथै, अज्ञानी दिन रात।
कूकर सम भूकत फिरै, सुनी सुनाई बात।।

75. पण्डित छोड़ो पातरा, काजी छोड़ कुरान।
वह तारीख बताय दे, थे न जिमी आसमान।।

76. पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुवा, पण्डित हुआ न कोय।
एकै अक्षर प्रेम का, पढ़े सो पण्डित होय।।

77. नहिं कागद नहिं लेखनी, निः अक्षर है सोय।
बांचहिं पुस्तक छोड़ि के, पण्डित कहिये सोय।।

78. प्रेम न बाड़ी ऊपजै, प्रेम न हाट बिकाय।
राजा–परजा जेहि रुचें, शीश देई ले जाय।।

79. जब लग नाता जगत का, तब लग भगिति न होय।
नाता जोड़े हरि भजे, भगत कहावें सोय।।

80. जब लगि भगति सकाम है, तब लग निष्फल सेव।

कह कबीर वह क्यों मिले, निष्कामी तज देव।।

81. कबीरा संगति साधु की, हरे और की व्याधि।
संगति बुरी असाधु की, आठो पहर उपाधि।।

82. एक ते जान अनन्त, अन्य एक को आय।
एक से परचे भया, एक बाहे समाय।।

83. जा करण जग ढूँढ़िया, सो तो घट ही माहिं।
परदा कीया भरम का, ताते सूझे नाहिं।।

84. तू तू करता तू भया, मुझ में रही न हूँ।
वारी फेरी बलि गई, जित देखौं तित तू।।

85. साईं आगे साँच है, साईं साँच सुहाय।
चाहे बोले केस रख, चाहे घौंट मुण्डाय।।

86. लघुता से प्रभुता मिले, प्रभूता से प्रभू दूरि।
चींटी ले शक्कर चली, हाथी के सिर धूरि।।

87. यह तो घर है प्रेम का, खाला का घर नाहिं।
सीस उतारे भुँई धरे, तब पैठें घर मांहि।।

88. मूँड़ मुड़ाये हरि मिले, सब कोई लये मुड़ाय।
बार–बार के मूड़ते, भेड़ न बैकुण्ठ जाय।।

89. दस द्वारे का पींजरा, तामें पंछी मौन।
रहे को अचरज भयौ, गये अचम्भा कौन।।

90. दया कौन पर कीजिये, कापर निर्दय होय।
साईं के सब जीव हैं, कीरी कुंजर दोय।।

91. जा घट प्रेम न संचरे, सो घट जान मसान।
जैसे खाल लुहार की, सांस लेतु बिन प्रान।।

92. कबिरा एक न जाण्यां, बहु जाण्यां क्या होइ।
एकै तै सब होत है, सब तैं एक न होइ।।

93. कबीरा खड़ा बजार में, सबकी मांगे खैर।

ना कांहू से दोस्ती, ना कांहू से बैर।।

94. चलती चाकी देख के दिया कबीरा रोय।
दो पाटन के बीच में, साबुत बचा न कोय।।

95. माली आवत देख के, कलियन करी पुकार।
फूले फूले बिन लिये, कल्हि हमारी बार।।

96. हिन्दू दया मेहर तुर्कन की, दूनो घट से त्यागी।
ये हलाल वै झटका मारैं, आगि दुनो घर लागी।।

97. हिन्दू तुर्क की एक राह है, सतगुरु सोई लखाई।
कहहि कबीर सुनो ओ संतों, राम न कहै खोदाई।।

98.